श्रीनवद्वीपधाम महात्मय

SGD

श्रीलगुरुदेव

श्रीलगुरुदेव

श्रीश्रीगुरु- गौरांगौ जयतः

श्रीनवद्वीप के नौ द्वीपों के नाम और उनकी महिमा

श्रीमद् भागवत में वर्णित — श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन — इन नौ प्रकार के भक्ति के अंगों का पीठ स्वरूप है — श्रीनवद्वीपधाम। इस धाम के अन्तर्गत नौ द्वीप हैं, जिनमें प्रत्येक द्वीप की अपनी ही अलग महिमा है।

श्रीअन्तर्द्वीप

'अन्तर्द्वीप' नौ प्रकार भक्ति के अगों में से एक प्रधान अंग 'आत्मनिवेदन' का क्षेत्र है। इसके अन्तर्द्वीप नाम होने का कारण यह है—

द्वापरयुग में श्रीकृष्णावतार के समय, जब श्रीकृष्ण ने गोपबालकों के साथ श्रीवृन्दावनधाम में बछड़ों को चराने की लीला प्रकट की थी, उस समय एक दिन ब्रह्माजी ने, उनके वास्तविक तत्त्व को जानने के लिए गोपबालक व बछड़ों को अपहरण करके श्रीकृष्ण के चरणों में अपराध

किया था। श्रीकृष्ण की महिमा जानने के बाद ब्रह्मा जी ने उनकी स्तुति की व उनका आशीर्वाद प्राप्त किया था। साथ ही यह प्रार्थना की थी कि वे उन पर ऐसी कृपा करें जैसे उन्हें अपने पर सृष्टिकर्ता ब्रह्मा होने का अभिमान न हो। तब श्रीकृष्ण, उनके सम्मुख गौररूप से आविर्भूत हुए थे।

ब्रह्मा जी ने इस स्थान पर, अपनी अन्तर की कथा अर्थात् दिल की बात श्रीगौरहरि के पास व्यक्त की थी, इसलिये इस स्थान का नाम 'अन्तर्द्वीप' हुआ।

इस सम्बन्ध में श्रील भक्तिविनोद ठाकुर जी अपने 'श्रीनवद्वीपधाम

माहात्म्य' ग्रन्थ के पांचवें अध्याय में लिखते हैं -

श्रीजीव, बलेन प्रभु, बलह एखन ।
अन्तर्द्वीप नामेर ये यथार्थ कारण ।।

प्रभु बलेन, एइ स्थाने द्वापरेर शेषे ।
तपस्या करिल ब्रह्मा, गौर कृपा - आशे।।

गोवत्स गोपाल सब करिया हरण ।
छलिल करिया माया गाविन्देर मन ।।

निजमाया पराजय देखि चतुर्मुख ।
निज- कार्य दोषे बड़ पाइल असुख ।।

बहु स्तव करि' कृष्णे करिल मिनति ।
क्षमिल ताहार दोष वृन्दावन - पति ।।

तबु ब्रह्मा मने - मने करिल विचार ।
बह्मबुद्धि मोर हय अतिशय छार ।।

एइ बुद्धि दोषे कृष्ण- प्रेमेते रहित ।
वजलीला - रसभोगे हइनु वन्चित ।।

गोपाल हइया जन्म पाइताम आमि।
सेविताम अनायासे गोपिकार स्वामी ।।

से लीला - रसेते मोर ना हइल गति।
एबे से श्रीगौरांग मोर ना हय कुमति ।।

एइ बलि बहुकाल अन्तर्द्वीप-स्थाने ।
तपस्या करिया ब्रह्मा, रहिल धेयाने ।।

कतदिने गौरचन्द्र करुणा करिया ।
चतुर्मुख - सन्निधाने कहेन आसिया।।

ओहे ब्रह्मा, तव तपे तुष्ट हये आमि ।
आसिलाम दिते याहा आशा कर
तुमि॥

नयन मेलिया ब्रह्मा, देखि गौरराय ।
अज्ञान हइया भूमे पड़िल तथाय ॥

ब्रह्मार मस्तके प्रभु धरिल चरण ।
दिव्यज्ञान पेये बह्मा करय स्तवन ॥

आमि दीन हीन अति अभिमान - वशे।
पासरिया तव पद फिरि जड़ रसे ॥

आमि, पन्चानन, इन्द्र आदि देवगण ।
अधिकृत दास तव शास्त्रेर लिखन ॥

शुद्ध दास हैते आमादेर भाग्य नय ।
अतएव माया मोहजाल विस्तारय ॥

प्रथम परार्ध मोर काटिल जीवन।
एबे त' चरम चिन्ता करये पोषण ।।

द्वितीय परार्ध मोर काटिबे केमने।
बहिर्मुख हइले यातना बड़ मने ।।

एइमात्र तव पदे प्रार्थना आमार ।
प्रकट लीलाय येन हइ परिवार ।।

बह्मबुद्धि दूरे याय हेन जन्म पाइ।
तोमार संगेते थाकि तव गुण गाइ ।।

बझार प्रार्थना शुनि गौर भगवान ।
'तथास्तु बलिया वर करिलेन दान ।।

ये समये मम - लीला प्रकट हइबे ।
यवनेर गृहे तुमि जनम लभिबे ।।

आपनाके हीन बलि हइबे गेयान ।
हरिदास हवे तुमि शून्य अभिमान ।।

तिन लक्ष हरिनाम जिह्वाग्र नाचिबे ।
निर्याण समये तुमि आमाके देखिबे।।

एइ त' साधनबले द्विपरार्ध- शेषे ।
पावे नवद्वीप धाम मजि' नित्यरसे ।।

ओहे बह्मा शुन मोर अन्तरेर कथा ।
व्यक्त कभु ना करिबे शास्त्रे यथा
तथा।।

भक्तभाव ल 'ये भक्ति रस आस्वादिव।
परम दुर्लभ संकीर्तन प्रकाशिव ।।

अन्य अन्य अवतार - काले भक्त यत ।
व्रजरसे सबे माताइब करि' रत ।।

श्रीराधिका - प्रेम - बद्ध आमार हृदय ।
ताँर भाव कान्ति ल ये हइब उदय।।

किबा सुरव राधा पाय आमारे सेविया।
सेइ सुख आस्वादिव राधा - भाव
लइया ।।

आजि हइते तुमि मोर शिष्यता लभिवे।
हरिदास - रूपे मोरे सतत सेविबे ।।

एत बलि' महाप्रभु हइल अन्तर्धान ।
आछाड़िया पड़े ब्रह्मा हइया अज्ञान ।।

भावानुवाद : श्रीजीव गोस्वामी जी ने श्रीनित्यानन्द प्रभु जी अब अन्तर्द्वीप नाम का यथार्थ कारण क्या है, कृपा से कहा, करके कहें।

श्रीनित्यानन्द प्रभु कहते हैं कि इस स्थान पर द्वापर युग के शेष में श्रीगौर कृपा लाभ की आशा से ब्रह्माजी ने तपस्या की थी। गायों के बछड़े और ग्वालबालों को अपनी माया से हरण करके ब्रह्माजी ने श्रीगोविन्द के मन को छलने की चेष्टा की। किन्तु अपनी माया की पराजय देखकर चतुर्मुख ब्रह्माजी को अपनी गल्ती का अनुभव हुआ तथा अपने कार्य से स्वयं ही दोषी होकर, बड़े दुःखी हुए। बहुत स्तव करके उन्होंने श्रीकृष्ण से विनती की थी, तब वृन्दावनपति श्रीकृष्ण ने, उनका दोष क्षमा कर दिया था।

ब्रह्मा जी ने मन- मन में विचार किया, यही ब्रह्मबुद्धि (में ब्रह्मा हूँ) मेरे लिये अति तुच्छ है। इस बुद्धि दोष से मैं, कृष्णप्रेम से रहित होकर उनके दिव्य रस के आस्वादन से वंचित रह गया हूँ। गोपगृह में जन्म पाने से, अनायास से गोपियों के स्वामी, श्रीकृष्ण की सेवा करने का सुयोग मिलता है। मुझे श्रीकृष्ण लीला में तो प्रवेश का अधिकार नहीं मिल सका, अब श्रीगौरांग में मेरी कुमति न हो — ऐसा सोचकर ब्रह्मा जी बहुत लम्बे समय तक तपस्या करने के लिए ध्यान में बैठ गये। बहुत दिनों बाद श्रीगौरचन्द्र करुणा करके चतुर्मुख ब्रह्माजी के सामने प्रकट हुए एवं कहने

लगे — ओहे ब्रह्मा ! तुम्हारे तप से मैं संतुष्ट हुआ हूँ। तुम्हारी इच्छा को पूरी करने के लिए ही मैं तुम्हारे पास आया हूँ। अपनी आँखें खोलकर ब्रह्माजी ने श्रीगौरहरि के दर्शन किये एवं भगवद्-प्रेम में मूर्च्छित होकर भूमि पर पड़ गये। ब्रह्मा जी के मस्तक पर श्रीमन्महाप्रभु जी ने अपने चरण रख दिये तो ब्रह्मा जी को दिव्यज्ञान प्राप्त हुआ। दिव्य ज्ञान पाकर ब्रह्मा जी ने श्रीगौरांग महाप्रभु जी की स्तुति की। अपनी स्तुति में ब्रह्मा जी ने कहा —

मैं दीन हीन हूँ, अति अभिमान के वश में होकर आपके पादमझों को भूलकर, जड़ रस में मग्न हूँ। मैं और

शिव तथा इन्द्र आदि देवगण सब आपके अधिकृत दास हैं, ऐसा शास्त्र कहते हैं। आपका शुद्ध दास होना मेरे भाग्य में नहीं था, इसीलिए तो मैं आपके मोह-माया जाल में फंस गया। मेरा प्रथम परार्धकाल जीवन अर्थात् आधी आयु कट गयी है। अब तो बहुत चिन्ता हो गई है। मेरा द्वितीय परार्धकाल कैसे कटेगा? आपके बहिर्मुख होने के कारण मुझे बहुत यातना भोग करनी होगी। इसलिये अब आपके चरणकमलों में यही प्रार्थना है, जैसे आपकी अगली प्रकटलीला में मैं आपके परिवार में रहूँ तथा ऐसा जन्म पाऊँ जैसे मेरी

ब्रह्मबुद्धि दूर हो जाये एवं आपके संग रहकर, आपका गुणगान करता रहूँ।

ब्रह्मा जी की प्रार्थना सुनकर श्रीगौरभगवान ने 'तथास्तु' कहकर वर दिया एवं कहने लगे, जिस समय मेरी लीला प्रकट होगी, तुम यवन के घर में जन्म ग्रहण करोगे। तब आपका अपने प्रति हीन ज्ञान होगा। तब तुम्हारा नाम 'हरिदास' होगा और तुम अभिमान शून्य होओगे। आप तीन लाख 'नाम' नित्यप्रति करोगे एवं निर्याण के समय तुम्हें मेरा दर्शन मिलेगा। इस प्रकार साधन के बल से, द्विपरार्ध के शेष में, श्रीनवद्वीप धाम प्राप्त करके तुम मेरे दिव्य रस में मत्त रहोगे।

ओहे ब्रह्मा ! मेरी अन्तर की कथा अर्थात् मेरे दिल की बात सुनो, इसे जहाँ-तहाँ मत सुना देना। मैं भक्त का भाव लेकर भक्ति रस का आस्वादन करूँगा एवं परम दुर्लभ श्रीनामसंकीर्तन का भी प्रकाश करूँगा। यही नहीं, अपनी इस लीला में अन्य - अन्य अवतार काल के जितने भी भक्त हैं, सभी को इस लीला में लाऊंगा और सभी को ब्रजरस में मत्त कर दूँगा। चूंकि मेरा हृदय श्रीराधिका के प्रेम में आबद्ध है, इसीलिये उनका भाव तथा उनकी कान्ति लेकर, मैं प्रकट होऊँगा। मेरी सेवा करने से, श्रीराधा को क्या सुख मिलता है, वही सुख, आस्वादन के

लिये, मैं श्री राधा - भाव को लूंगा। आज से तुम मेरी शिष्यता को लाभ करोगे तथा हरिदास रूप से मेरी हमेशा सेवा करोगे। इतना कहकर श्रीमन् महाप्रभु जी अन्तर्धान हो गये एवं इधर ब्रह्मा जी पछाड़ खाकर भूमि पर गिर पड़े तथा मूर्च्छित हो गये।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव